पाठ - 19

शतरंज के खिलाड़ी

लेखक - मुंशी प्रेमचन्द

प्रस्तावना

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। अकेले रहना, समूह में रहना और समाज बनाकर रहना हमारी दुनिया में ये ही **तीन स्थितियाँ** हैं। इन स्थितियों में से तीसरी यानी समाज बनाकर रहने की स्थिति सिर्फ मनुष्य की है, इसीलिए उसे सभी प्राणियों में श्रेष्ठतम प्राणी होने का गौरव प्राप्त है मनुष्य को देश और समाज से अनेक रूपों में बहुत कुछ मिलता है, इसलिए उसका भी यह कर्तव्य है कि वह तन, मन और धन सभी तरीकों से इस ऋण से मुक्त होने का प्रयास करें। बहुत से मनुष्य अपने इस कर्तव्य का पालन करने में रुचि नहीं दिखाते और अपना पेट भरने, अपने शौक पूरे करने और अपनी सुख–सुविधाओं का आनन्द लेने में लगे रहते हैं। किसी देश की शासन व्यवस्था से जुड़े लोग ऐसा करते हैं तो यह बीमारी जनता तक भी **पहुँच** जाती है और देश बर्बाद हो जाता है।

सारांश

वाजिदअली शाह का समय था। लखनऊ विलासिता के रंग में डूबा हुआ था। छोटे–बड़े, गरीब–अमीर सभी विलासिता में डूबे हुए थे। कोई नृत्य की कोई गान की मज़लिस सजाता था, तो कोई अफ़ीम की पिनक ही में मज़े लेता था। जीवन के प्रत्येक भाग में आमोद–प्रमोद का प्राधान्य था। शासन विभाग में, साहित्य क्षेत्र में, सामाजिक अवस्था में, कला कौशल मे, उद्योग धंधों में, आहार व्यवहार में, सर्वत्र विलासिता व्याप्त हो रही थी।

राज कर्मचारी विषय वासना में, व्यवसायी सुरमे, इत्र, मिस्सी और उबटन का व्यवसाय करने में लिप्त थे। सभी **आँखों** में विलासिता करने में लिप्त थे। सभी की **आँखों** में विलासिता का मद छाया हुआ था। संसार में क्या हो रहा है, इसकी किसी को खबर न थी। बटेर लड़ रहे हैं। तोतरों की लड़ाई के लिए पाली **बाँधी** जा रही है, कहीं चौसर बिछी हुई है,

पौ बारह का शोर मचा हुआ है। कहीं शतरंज का घोर संग्राम छिड़ा हुआ है। राजा से लेकर रंक तक इसी धुन में मस्त थे। यहां तक कि फकीरों को पैसे मिलते, तो व **रोटियाँ** न लेकर रंक तक इसी **धुन** में मस्त थे।

मिर्ज़ा सज्जाद अली और मीर **रौशन**अली अपना अधिकांश समय बुद्धि तीव्र करने में व्यतीत करते थे तो किसी विचारशील पुरुष को क्या आपत्ति हो सकती थी। दोनों के पास मौरूसी जागीरें थीं, जीविका की कोई चिन्ता न थी, घर मे बैठे चरवौ**तियाँ** करते थे। आखिर और करते ही क्या? प्रातःकाल दोनों मित्र नाश्ता करके बिसात बिछाकर बैठ जाते, मुहरे सज जाते और लडाई के **दाँव** पेंच होने लगते। फिर खबर न होती थी कि कब दोपहर हुई और कब शाम। **मिरजा सज्जादअली** के घर कोई बूढ़ा न था, इसलिए उन्हीं के दीवानखाने में बाजियां होती थीं। मगर यह बात न थी कि मिर्ज़ा के घर के और लोग उनके इस व्यवहार से खुश हों। घर तो घर, मुहल्ले वाले, घर के नौकर–चाकर तक नित्य द्वेषपूर्ण टिप्पणि**याँ** किया करते थे–बड़ा मनहूस खेल है। घर को तबाह कर देता है, खुदा न करे किसी को इसकी लत लगे। यहां तक कि मिर्ज़ा की बेगम को इससे इतना द्वेष था कि अवसर खोज–खोज कर पति को लताड़ती थीं। एक दिन बेग़म साहिबा के सिर में दर्द होने लगा। उन्होंने लौंडी से कहा–जाकर **मिरजा साहब** को बुला ला। किसी हकीम के **यहाँ से दवा लायें** । दौड़ जल्दी कर, लौंडी गई तो मिर्ज़ा साहब ने कहा–चल, अभी आते हैं। बेग़म साहब का मिजाज़ गर्म था। इतनी सब्र **कहाँ** कि उनके सिर में दर्द हो और पति शतरंज खेलता रहे। चेहरा सुर्ख़ हो गया। लौंडी स कहा जाकर बोल अभी चलिए, नहीं तो वे अपने आप हो हकीम के पास चली जाएंगी। **मिरजा** साहब बड़ी दिलचस्प बाज़ी खेल रहे थे। दो ही किस्तों में मीर साहब की मात हुई जाती थी। **झुँझलाकर** बोले–क्या ऐसा दम लम्हों पर है? ज़रा सब्र नहीं होता? मीर–अरे, **तुम** जाकर सुन ही **आओ** न, औरतें नाजुक मिजाज़ होती ही हैं।

मिरजा–जी **हाँ**, चला क्यों न **जाऊँ**, दो किस्तों में आपकी मात होती है।

मीर–मैं आगे **खेलूँगा** ही नहीं, पहल आप जाकर सुनकर आइये। **मिरजा** चले जाते हैं और अपनी बेग़म से कहते हैं क्या करू मीर साहब पीछा छोड़ते ही नहों।

बेगम –क्या जैसे वह खुद निखट्टू हैं, वैसे ही सबको समझते हैं। उनके भी तो बाल–बच्चे हैं, या सबका सफ़ाया कर डाला?

मिरजा–बड़ा लती आदमी है।

बेग़म–दुत्कार क्यों नहीं देते ?

मिरजा–बराबर के आदमी हैं।

बेग़म–तो मैं ही दुत्कार देती **हूँ**।

मिरजा हाँ, हाँ ! कहीं ऐसा गज़ब भी न करना, जलील करना चाहती हो क्या? ठहर हरिया **कहाँ** जाती है।

बेग़म–जाने क्यों नहीं देते ? मेरा ही खून पिए, जो उसे रोके।

यह कहकर बेगम साहब झल्लाई हुई दीवान खाने की तरफ चलीं। मिरजा बेचारे **का** रंग उड़ गया। बीबी की मिन्नतें करने लगे, खुद के लिए, तुम्हें हज़रत हुसैन की कसम है। मेरो ही मैयत देखो, जो उधर जाये लेकिन बेग़म ने एक न मानी। दीवानख़ाने के द्वार तक गईं पर एकाएक पुरुष के सामने जाते हुए **पाँव बंध** से गये। भीतर **झाँका** संयोग से कमरा खाली था। मीर साहब ने दो–एक मुहरे इधर उधर कर दिये थे और अपनी सफाई जताने के लिए बाहर टहल रहे थे। बेग़म ने अंदर **पहुँचकर** मुहरे इधर–उधर फेंक दिए, किवाड़ अन्दर से बन्द कर**के** कुंडी लगा दी। यह देखकर मीर साहब ने चुपके से घर की राह ले ली।

मिरजा–तुमने गज़ब किया!

बेग़म–अब मीर साहब इधर आए तो खड़े खड़े निकलवा **दूँगी**।

मिरजा घर से निकले तो हकीम साहब के घर **पहुँचने** के बदले मीर साहब के घर **पहुँचें** और सारा वृतांत सुनाया। मीर साहब तो भनक लगते ही भाग निकला था परन्तु आपने उन्हें यों सिर चढ़ा रखा है, यह मुनासिब नहीं है।

मिरजा – खैर यह तो बताइये अब **कहाँ** जमाव होगा?

मीर– इसका क्या ग़म है। इतना बड़ा घर पड़ा हुआ है, बस यहीं जमे।

मिरजा –पर बेग़म को **कैसे मनाऊँगा**?

मीर–अजी बकने भी दीजिए दो–चार रोज़ में आप ही ठीक हो जाएंगी।

राज्य **में** हाहाकार मचा हुआ था। प्रजा दिन दहाड़े **लूटी** जाती थी। कोई फरियाद सुनने वाला न था। देहातों की सारी दौलत लखनऊ में **खीचीं** आती थी। वह वैश्याओं में, भांडों में और विलासिता के अन्य अंगों की पूर्ति में उड़ जाती थी। अंग्रेज कम्पनी का ऋण दिन–दिन बढ़ता जाता था। देश की व्यवस्था गड़बड़ा रही थी। इस कारण वार्षिक कर भी वसूल न होता था। रेजीडेंट बार–बार चेतावनी दे रहा था। पर **यहाँ** तो लोग विलासिता के नशे में चूर थे। किसी के कानों में जूं तक रेंगती न थी। ख़ैर मीर साहब के दीवानखाने में शतरंज होते कई महीने गुज़र गए। नए–नए नक्शे हल किए जाते, नए–नए किले बनाए जाते, नित्य कई व्यूह रचना होती, लड़ाई होती गुस्सा होते परन्तु प्रातः काल दोनों मित्र दीवानखाने में आ पहुंचते थे।

एक दिन दोनों मित्र बैठे हुए शतरंज की दलदल में गोते खा रहे थे कि इतने में घोड़े पर सवार एक बादशाही फ़ौज का अफ़सर मीर साहब का नाम पूछता हुआ आ **पहुँचा**। मीर साहब के होश उड़ गये। यह क्या बला सिर आ गई। घर के दरवाज़े बन्द कर लिये। नौकरों से बोले कह दो, घर में नहीं हैं।

सवार–घर में नहीं, तो कहां हैं?

नौकर–मैं नहीं जानता।

सवार–काम तुझे क्या **बताऊंगा**।

नौकर–अच्छा तो जाइये, कह दिया जाएगा।

सवार–कहने की बात नहीं, मैं कल खुद **आऊँगा**।

मिरजा–बड़ी मुसीबत है।

मीर–कम्बख्त कल फिर आने को कह गया है।

मिरजा–आफ़त है, और क्या? कहीं मोर्चे पर जाना पड़ा तो बेमौत मरे।

मीर–बस, यही एक तदबीर है कि घर पर मिलो ही नहीं, कल गोमती पर कहीं वीराने में नक्शा जमे।

मिरजा –वल्लाह, आपको खूब सूझी।

दूसरे दिन दोनों मित्र **मुँह** अंधेरे घर से निकल खड़े होते हैं। बगल में एक छोटी सी दरी दबाए डिब्बे में गिलौरि**याँ** भरे गोमतो पार की। एक पुरानी वीरान **मस्जिद** में चले जाते, जिसे शायद नवाब आसिफ़उद्दौला ने बनवाया था। रास्ते में तम्बाकू चिलम और मदरिया ले लेते, और मसजिद में **पहुँच**, दरी बिछाकर, हुक्का भरकर शतरंज खेलने बठ जाते थे। फिर उन्हें दीन दुनिया की फ्रिक **नहीं** रहती थी। इधर देश की राजनीतिक दशा भयंकर होती जा रही थी। कम्पनी की फौजें लखनऊ की तरफ बढ़ी चली आती थीं। शहर में हलचल मची हुई थी। लोग बाल–बच्चों को लेकर देहातों में भाग रहे थे। पर, हमारे दोनों खिलाड़ियों को इसकी ज़रा भी फिक्र न थी। वे घर से आते, तो गलियों में होकर। डर था कि कहीं किसी बादशाही मुलाज़िम की निगाह न पड़ जाए, जो बेकार मे ंपकड़े **जाएँ**।

एक दिन दोनों मित्र मसाजिद के खंडहर में बैठे हुए शतरंज खेल रहे थे। मीर की बाजी कुछ कमजोर थी। **मिरजा** साहब उन्हें किश्त पर किश्ते दे रहे थे। इतने में कम्पनी के सैनिक आते हुए दिखाई दिए। वह गोरों की फ़ौज थी, जो लखनऊ पर अधिकार जमाने के लिए आ रही थी।

मीर साहब बोले–अंग्रेजों की फौज आ रही है, खुदा खैर करे।

मिरजा आने दीजिए, किश्त बचाइये। यह किश्त, मीर ज़रा देखना चाहिए, यहीं आड़ में खड़े हो जाएं।

मीर–तोपखाना भी है, कोई **पाँच** हजार आदमी होंगे, कैसे–कैसे जवान हैं। लाल बन्दरों के से **मुँह**। सूरत देखकर खौफ मालूम होता है ।

मीर–आप भी अजीब आदमी हैं। **यहाँ** तो शहर पर आफत आयी हुई है और आपको किश्त की सूझी है।

फौज निकल गई। दस बजे का समय था। फिर बाजी बिछ गई।

मीर–अजी, आज तो रोज़ा है। क्या आपको ज्यादा भूख मालूम होती है?

मिरजा –शहर में न जाने क्या हो रहा है ?

मीर–कुछ नहीं सब मजे से सो रहे होंगे। हुजूर नवाब साहब भी ऐशगाह में होंगे।

दोनों सज्जन फिर जो खेलने बैठे, तो तीन बज गए। चार का गजर बज ही रहा था कि फौज की वापसी की आहट मिली। नवाब वाजिदअली पकड़ लिए गए थे और सेना उन्हें किसी अज्ञात स्थान को लिए जा रही थी। शहर में न कोई हलचल थी न कोई मारकाट। आज तक किसी स्वाधीन देश के राजा की पराजय इतनी शांति से, इस तरह खून बहे बिना न हुई होगी।

अवध के विशाल देश का नवाब बन्दी चला जाता था और लखनऊ ऐश की नींद में मस्त था। यह राजनीतिक अधपतन की चरम सीमा थी।

मिर्ज़ा ने कहा- हुजूर नवाब साहब को ज़ालिमों ने कैद कर लिया है।

मीर—होगा, यह लीजिए शह।

मिर्ज़ा—खुद की कसम, आप बड़े बेदर्द हैं, इतना बड़ा हादसा देखकर भी आपको दुख नहीं होता। हाय, गरीब वाजिदअली शाह!

मीर—पहले अपने बादशाह को तो बचाइये फिर नवाब साहब का मातम कीजिएगा। यह किश्त और यह मात! लाना हाथ!

बादशाह को लिए सेना सामने से निकल गई। खेलते-खेलते दोनों के बीच तकरारें होने लगीं और तकरार बढ़ने लगी। दोनों अपनी—अपनी टेक पर अड़े थे। न यह दबा था न वह। अपासंगिक बातें होने लगीं । **मिरजा** बोले—किसी ने खानदान में शतरंज खेली होती, तब तो इसके कायदे जानते। वे हमेशा, घास छीला करते थे, आप शतरंज क्या खेलिएगा। रियासत और ही चीज़ है, जागीर मिल जाने से ही कोई रईस नहीं हो जाता।

मीर—क्या? घास आपके अब्बाजान छीलते होंगे। यहां तो पीढ़ियों से शतरंज खेलते चले आ रहे हैं।

मिरजा —अली, जाइए भी, गाज़ीउद्दीन हैहद के यहां बावर्ची का काम करते—करते उम्र गुज़र गई, आज रईस बनने चले हैं, रईस बनना कुछ दिल्लगी नहीं है।

मीर—क्यों अपने बुजुर्गों के **मुँह** में कालिख लगाते हो—वे ही बावर्ची का काम करते होंगे। **यहाँ** तो हमेशा बादशाह के दस्तख्वाब पर खाना खाते चले आए हैं।

मिरजा -अरे चल चरकटे, बहुत बढ़—चढ़कर बातें न कर।

मीर–जबान संभालिए, वरना बुरा होगा। मैं एसी बातें सुनने का आदी नहीं **हूँ**।

मिरजा –आप मेरा हौसला देखना चाहते हैं, तो फिर आइये, दो–दो हाथ हो जाए।

दोनों दोस्तों न कमर से तलवारें निकाल लीं। उनमें राजनीतिक भावों का अधपतन हो गया था, बादशाह के लिए, बादशाहत के लिए क्यों मरें, पर व्यक्तिगत वीरता का अभाव न था। दोनों ज़ख्म खाकर गिरे और दोनों ने वहीं तड़प–तड़प के जाने दे दीं। अपने बादशाह के लिए जिनकी **आँखों** स एक बूंद **आँसू** न निकला, उन्हीं दोनों प्राणियों ने शतरंज के वजीर की रक्षा में प्राण दे दिए।

अंधेरा हो चला था। बाजी बिछी हुई थी। दोनों बादशाह अपने–अपने सिंहासनों पर बैठे हुए मानों इन दोनों वीरों की मृत्यु पर रो रहे थे। चारों तरफ सन्नाटा छाया हुआ था। खंडहर की टूटी हुई मेहराबें, गिरी हुई दीवारें और धूल–धूसरित मीनारें इन लाशों को **देखती** और सिर धुनती थीं।

जीवन–परिचय

मुंशी प्रेमचन्द

जन्म : मुंशी प्रेमचन्द का जन्म 1880 में वाराणसी के लमही नामक गांव में हुआ था।

शिक्षा : उनकी शिक्षा वाराणसी में ही हुई। पहले वह उर्दू में लिखते थे, बाद में उन्होंने हिन्दी को अपनाया।

रचनाएँ- साढ़े तीन सौ कहानि**याँ** मानसरोवर में आठ खण्डों में प्रकाशित हैं, सेवासदन, गोदान, रंगभूमि, कर्मभूमि

साहित्य में स्थान :

हिन्दी साहित्य जगत में उन्हें कहानी तथा उपन्यासों का सम्राट कहा जाता है।

मृत्यु : मुंशी प्रेमचंद की मृत्यु **सन** 1936 में हुई थी।